संपादकीय

हमारे संस्थापक डॉ० पंजाबराव देशमुख जी की 116वीं जयंती 27 दिसम्बर, 2014 को भारत कृषक समाज के केन्द्रीय कार्यालय, नई दिल्ली में मनाई गई। किसानों के कल्याण के लिऐ उनका सहयोग सदा याद रखा जाऐगा और हम भी उनके उद्देश्यों और विचारों को पूरा करने का भरसक प्रयास कर रहे हैं।

हमारे किसानों को मिलने वाले आर्थिक सहायता अन्य देशों की तुलना में बहुत कम है। विशेष रूप से कपास के मूल्य पिछले 4 वर्षों में लगभग आधे रह गऐ हैं। आजकल हम हर बात में अपनी तुलना चीन से करते हैं जबकि वहां पर इसके उलटा है। चीन अपने कपास उत्पादकों को 2,800/– रू. प्रति क्विंटल आर्थिक सहायता सीधे देता है जबकि बाजार से उन्हें 5,900/– रू. प्रति क्विंटल मिलते हैं, इस प्रकार उन्हें 8,700/– रू. प्रति क्विंटल की दर मिलती है। भारतीय किसान न्यूनतम समर्थन मूल्य से कम दाम पर कपास की बिक्री करते हैं और यह चीन की तुलना में आधे से भी कम है।

भारत में जिंसों के भाव गिर रहे हैं और किसान निराश हैं। कपास, चना, बासमती, मक्का, सरसों और कई अन्य जिंसों की बिक्री पिछले वर्ष के भावों की तुलना में 1/4 कम मूल्य पर किसानों द्वारा की जा रही है। गन्ना उत्पादकों को उनकी राशि अभी तक नहीं मिली। इतना होने पर भी किसान निराश हैं की उन्हें यूरिया और डी. ऐ.पी. जैसी उर्वरकों की खरीद बलैक में करनी पडती है जो सरकार द्वारा निर्धारित अधिकतम खूदरा मूल्य से 33 प्रतिशत तक महंगी होती है।

प्रधानमंत्री ने आशा व्यक्त की है की सबकुछ बेहतर होगा और अभी तक जो पहले हुआ वैसा नहीं होने दिया जाऐगा। उन्होंने एम.एस. स्वामीनाथन समिति की रिपोर्ट लागू करने का वायदा किया है जिसमें सिफारिश की गई है कि कृषि जिंसों खरीद मूल्यों का निर्धारण उत्पादन लागत + 50 प्रतिशत लाभ पर किया जाऐ। लागत शब्द मुख्य विषय वस्तु है। हम उस लागत या कीमत को स्वीकार नहीं कर सकते जैसा कृषि लागत एवम् मूल्य आयोग (सी.ऐ.सी.पी.) या किसी ऐसी डम्मी संस्था द्वारा निर्धारित किया जाता है। जैसा किसी भी निति में होता है कि फाईन प्रिन्ट होने से जो मुख्य लाईनों में छापा जाता है उसमें आधे से अधिक छुपा लिया जाता है। वर्ष 2015 का बजट निर्णायक सिद्ध हो सकता है। यहां एक अच्छा समाचार है कि वित्त मंत्रालय ने बजट 2015 के लिऐ किसानों के विचार प्राप्त करने की प्रक्रिया शुरू कर दी है। हमारा अतित का अनुभव हमें संक्ष्य में रखता है और हम यह मानते हैं कि ऐसा ढोंग अब नहीं होगा। हम आशा करते हैं कि हमारे संक्ष्य दूर होंगे।

डॉ० यू.ऐस. अवस्थी – प्रबंध निदेशक, इफको

उर्वरक उद्योग : सभी के द्वारा बजाऐ जाने वाला ढोल

उर्वरक उद्योग एक ऐसा ढोल है जिसे हर कोई बजा रहा है जबकि उर्वरक उद्योग से कृषि और किसानों को किसी न किसी प्रकार से सराहनीय सहयोग मिल रहा है। इस उद्योग में कोई निवेश करना नहीं चाहता इसी कारण इसमें निवेश की राशि ना के बराबर है। मेरे संपूर्ण केरियर में ही यह उद्योग बुलंदियों को छूकर अस्त होने के कगार पर है। वित्त मंत्रालय इसे और पैसा नहीं देना चाहता, मीडिया कभी भी किसानों के प्रति गंभीर नहीं रहा और न ही उर्वर उद्योग के भाग्य में प्रति क्योंकि इसमें निजी क्षेत्र की बहुत कम भागीदारी है। विद्वान और बडे–बडे लोग इस उद्योग से संबंधित सूचना और आंकडों से भली–भांति परिचित नहीं हैं।

उदाहरण के लिऐ जब हम 80,000 करोड़ रूपऐ की आर्थिक सहायता की बात करते हैं, वास्तविक में यह एक 120,000 करोड़ रूपऐ है। इसमें से 40,000 करोड़ रूपऐ की आर्थिक सहायता कहां से आती है। क्या ऐसी कोई आर्थिक सहायता है जिसके लिऐ निधियां ना दी जाती हों ? इफको, एक सहकारी कंपनी, उर्वरक की सबसे बडी उत्पादक कंपनी है। जब यह कंपनी अपनी बुलंदियों पर थी तो भी कर देने के बाद इसका लाभ 1.5 प्रतिशत ही था। आमतौर पर यह 0.5 प्रतिशत से अधिक नहीं रहता। इस नगन्य लाभ पर कोई भी कंपनी अपना अस्तिव कब तक बचा सकती है ? वस्त्र मिलों की ही तरह सहकारी और उर्वरक उद्योग भी बंद होने के कगार पर हैं।

इसका प्रमुख कारण यह है कि भारत में शीघ्र निर्णय नहीं लिऐ जाते, सरकार और प्रशासन निर्णय लेना ही नहीं चाहते। वास्तव में एन.डी.ऐ. सरकार की सबसे पहली अच्छी बात यह नजर आई की उन्होंने सत्ता में आते ही योजना आयोग को बंद कर दिया। सवतंत्रता प्राप्ति के आरंभिक वर्षों में योजना बनाने की आवश्यकता थी। आज जब प्रत्येक राज्य और जिला अपनी योजना बनाने में सक्ष्म है तो ऐसे में यह कैसे हो सकता है कि पूरे देश के लिऐ आर्थिक सहायता देने की एक ही नीति कारगर हो ?

इसका परिणाम यह है कि पूरे देश में उर्वरक का उपयोग असमान है। कुछ क्षेत्रों में ड्रिप सिंचाई, कुछ में बोरोन, जिंक या सल्फर की आवश्यकता होती है। जब देश में विभिन्न प्रकार की भूमि है तो एक केन्द्रीय आर्थिक सहायता ही प्रत्येक क्षेत्र के लिऐ लाभकारी कैसे हो सकती है ? उर्वरक उद्योग की भी यह मांग है कि इसे आर्थिक सहायता की आवश्यकता नहीं है। कुछ लोग इस उद्योग में भ्रष्टाचार का तो कुछ असक्ष्मता आरोप लगाते हैं जबकि उन्हें यह नहीं मालूम की इस क्षेत्र में भारत सरकार ने ऑनलाईन उर्वरक निगरानी पद्धति बनाई है जहां पर कोई भी लॉगइन करके उर्वरक के माल, न्यूट्रिऐंटस, कच्ची सामग्री आदि से संबंधित सूचना देख सकता है। परिवहन और बिक्री मूल्यों का विवरण भी देखा जा सकता है। जब प्रत्येक वस्तु पर निगरानी है तो कोई हम पर भ्रष्टाचार और असक्ष्मता का आरोप कैसे लगा सकता है। भ्रष्टाचार के स्रोत्र का पता लगाऐ बिना आरोप लगाने से जांच एजेंसियों का पैसा ही व्यर्थ जाता है।

यूरिया का वास्तविक मूल्य 5.30 रू. प्रति किलो है और सरकार हमें इस पर 20,000 करोड रूपऐ की आर्थिक सहायता देती है जबकि नमक भी 12 रू. प्रति किलो है और इससे काफी महंगा है। क्या यह सही है ? जो लोग कहते हैं कि न्यूट्रिशियन आधारित आर्थिक सहायता निति (एन.बी.ऐस. पॉलिसी) सही नहीं है उन्हें सोचने की आवश्यकता है कि जब यह नीति लागू की गई थी उस समय 1 डॉलर का मूल्य 40 रू. था और आज लगभग 65.50 रू. है। यूरिया की कीमत इस कारण बढी है। क्या यह हमारे नियंत्रण में था ?

इसके पश्चात यूरिया के मूल्य बढाऐ बिना आर्थिक सहायता में लगातार कमी की गई। इसका प्रमुख कारण था कि सरकार निजी क्षेत्र को बढावा देना चाहती थी जो 50 रू. प्रति किलो की लागत पर यूरिया का उत्पादन

करता था। एक कारगर संस्था जैसे इफको कहना चाहती है कि यूरिया के लिऐ ऐन.बी.ऐस. नीति लागू रहे क्योंकि अंतर्राष्ट्रीय मूल्य की तुलना में हमारी उत्पादन लागत काफी कम आती है। इसका प्रभाव, घरेलू निर्माताओं के साथ नाइंसाफी हो रही है जो 20 लाख टन यूरिया का उत्पादन करते हैं।

यूरिया के लिऐ न्यूट्रिऐंट बेसड़ सब्सिडी लागू करना महत्वपूर्ण है जिसकी कई बार वकालत की जा चुकी है। सरकार समान आर्थिक सहायता भी लागू कर सकती है ताकि जिन्हें अतिरिक्त यूरिया खरीदना है वह खुले बाजार से खरीद सकें। पिछले वर्ष भारत के आर्थिक सर्वेक्षण में कहा गया है कि भारतीय कृषि 50 लाख टन अतिरिक्त आयातित यूरिया का उपयोग किया गया। इसकी जांच होनी चाहिऐ।

यह भी कहा गया कि खेती के लिऐ अधिक नाईट्रोजन का उपयोग करना अच्छा है जबकि उसके गंभीर प्रभावों का विश्लेषण नहीं किया गया। सबसे पहले नाईट्रोजन भूमि के जल में घुल जाता है और फिर इसे दूषित करता है। फसल की आवश्यकता अनुसार नाईट्रोजन का उपयोग करना चाहिऐ और वातावरण में विद्यमान नाईट्रोजन के उपयोग पर अनुसंधान करना चाहिऐ। बदल–बदल कर फसल लगाने की पुरानी पद्धती और जैव–उर्वरकों के उपयोग की संभावना देखी जानी चाहिऐ। इफको ने सदैव जैव–उर्वरकों जैसे गोबर के साथ थोडा यूरिया मिलाकर उपयोग करने की कडी वकालत की है। भारत में मिट्टी को 'मां' कहते हैं लेकिन उसी की देखभाल नहीं की जाती। इसके पश्चात भी हर कोई अच्छी फसल की उम्मीद करता है।

पंजाब और हरियाणा में पता चला है कि खेतों में आग लगाई गई क्योंकि मजदूर नहीं मिले। क्या उसी घर को किसी को जलाना चाहिऐ जिसमें वह रहता है ? यदि मजदूरों की कमी है तो कृषि से संबंधित जैव–उर्वरकों के साथ रोटावेटर का उपयोग किया जा सकता है। यूरिया का मूल्य कम होने के कारण किसान इसका अधिक उपयोग करते हैं और फिर वह कहते हैं कि भूमि यूरिया की आदि हो चुकी है। लोगों को इन मुद्दों के प्रति जागरूक करना चाहिऐ।

हमें बताया जाता है कि यूरिया की एक बोरी का बाजार भाव 700/– रू. है और किसानों को 300/– रू. की दर से बेचा जाता है और 400/– रू. की आर्थिक सहायता दी जाती है। सरकार आयात पर घरेलू उद्योग की राशि की तुलना में बहुत अधिक व्यय करती है। भारत ही एक ऐसा देश है जो उर्वरकों पर आर्थिक सहायता देता है और बंग्लादेश, नेपाल, पाकिस्तान और अफगानिस्तान को यूरिया भेज (स्मगल) दिया जाता है। सस्ता यूरिया न केवल भूमि का विनाश करता है बल्कि राजस्व घाटा भी बढ़ाता है और अवैघ गतिविधियों को भी प्रोतसाहित करता है।

इंटरनेट और सूचना प्रौद्योगिकी के युग में उर्वरक को भी सीधी आर्थिक सहायता में शामिल क्यों नहीं किया जा सकता जबकि एल.पी.जी., वृद्ध योजनाओं, शिक्षा के क्षेत्र में आर्थिक सहायता सीधे दी जा रही है ? किसान कार्ड एक स्मार्ट कार्ड के रूप में भी उपयोग किया जा सकता है। एक बटन दबाते ही लाखों खाताधारकों के खाते में पैसा जमा हो जाता है और इस कार्ड का उपयोग उर्वरकों की खरीद के लिऐ किया जा सकता है। ऐसा होने पर किसान यह भी जान लेंगे की उन्हें फॉसफेट, पोटाश पर कितनी आर्थिक सहायता मिल रही है। हालांकि यह सूचना बोरियों पर छपी होती है लेकिन अधिकतम किसान इसे नहीं पढते।

अन्य दृष्टिकोण से इस स्थिति पर विचार करते हैं। भारत और चीन में कृषि योग्य और सिंचित भूमि लगभग समान है। फिर भी चीन भारत की तुलना में चार गुना अधिक उर्वरक का उपयोग करता है। कभी चीन विश्व का सबसे बढा उर्वरक आयातक था और अब सबसे बढा निर्यातक है। रसायनिक उर्वरकों का वातावरण पर विचारनीय प्रभाव पडता है : भारत 20 लाख टन यूरिया का उत्पादन करता है लेकिन चीन ने 5 वर्षों में ही एक

कोएले पलांट से 70 लाख टन यूरिया तैयार किया है, जिसका प्रभाव कॉर्बन डाइऑकसाइड की मात्रा पर पडा और दुनिया में गर्मी बढी है। जम्मू एवम कश्मीर में बाढ, हुद–हुद का आना और फैलिन तूफान इसी का परिणाम है। भारत ऐसे उर्वरकों का आयात करता है और चीन को बहुमूल्य विदेशी मुद्रा का भुगतान कर रहा है।

महत्वपूर्ण बात यह है कि अपने दिमाग को सेट किया जाऐ और प्रत्येक को सरकारी आर्थिक सहायता देना बंद किया जाऐ। भारतीय मनरेगा, निशुल्क आहार, निशुल्क उर्वरक चाहते हैं। यदि केवल आर्थिक सहायता को समान बना दिया जाऐ और यह वहन करने योग्य भी हो तो ही हम इन विचारों को सफल बना पाऐंगे।

डॉ० जी.वी. रामअंजनेयूलू – कार्यकारी निदेशक, सेन्टर फॉर सस्टेनेबल ऐग्रीकल्चर

किसानों की सहायता : बैठक से बाहर सोचने की आवश्यकता

जैसे उर्वरक के क्षेत्र में उद्योग की संभावना है वैसे ही कृषि क्षेत्र में भी संभावना है। किसान भी वही प्रश्न पूछते हैं जैसा उद्योग जगत। एक तरफ तो आप मूल्य निर्धारित करते हैं और जब उत्पादन लागत बढ़ जाती है तो आप आर्थिक सहायता नहीं बढ़ाते। उर्वरक में भी ऐसी आर्थिक सहायता शुरू की गई थी जहां पर वास्तव में आर्थिक सहायता देते हुऐ मूल्य के पहलू को ध्यान में रखा जाऐ। खाद्य पदार्थ सस्ते होने चाहिऐ, इस कारण आहार मूल्य नियमित किऐ जाते हैं और उपकरणों पर आर्थिक सहायता दी जाती है। कई वर्षों से इस विषय पर अवयवस्थित विचार किया जाता है और बहुत ही टूटी–फूटी पहुंच के रूप में निर्णय लिऐ जाते हैं।

जब सरकार पर उर्वरक आर्थिक सहायता का बोझ बढता है तो वह इसमें कमी करती है और यह विचार नहीं करती की इसका उर्वरक उद्योग या किसानों पर कैसा प्रभाव पडेगा। वर्ष 2010 से उर्वरकों के मूल्यों में लगभग 2 से 3 गुना वृद्धि हो चुकी है जैसे फॉस्फोरस और पौटेशियम के मूल्य लेकिन कृषि जिंसों के मूल्य इस अनुपात में नहीं बढे। सरकार को मूल्य निर्धारित करते समय इस विषय पर विशेष रूप से सोचना चाहिऐ।

भारत में कम उर्वरकों के उपयोग का प्रश्न बहुत दिनों से सुलझा नहीं है। इसके उपयोग हेतु क्षेत्रीय विभिन्नताओं को भी ध्यान में रखने की आवश्यकता है। देश में आंध्र–प्रदेश में सबसे अधिक उर्वरक का उपभोग किया जाता है जो 251 कि.ग्रा. प्रति हेक्टेयर है। यह आंकडे सभी देशों से अधिक हैं केवल चीन को छोडकर। आंध्र–प्रदेश राज्य में 4 जिले हैं पूर्वी गोदावरी, पश्चिमी गोदावरी, कृष्णा और गंटूर जिसमें 60 से 70 प्रतिशत उर्वरक का उपभोग होता है। गंटूर के मिर्च उत्पादक गोदावरी किसानों की तुलना में 2 गुना अधिक मात्रा का उपयोग करते हैं। वास्तव में निम्न स्तर पर उपयोग में असमानता है। इसका समाधान करना ही महत्वपूर्ण मुद्दा है।

कृषि स्थान आधारित उद्योग है इस कारण एक सार्वभूमिक नीति काम नहीं करेगी। इसमें तकनीक, दी जाने वाली आर्थिक सहायता या मूल्यों का निर्धारण करने से भी काम नहीं चलेगा। आंध्र–प्रदेश में चावल के उत्पादन में लगभग 2,100/– रू. प्रति क्विंटल का खर्च आता है जैसा राज्य सरकार ने अनुमान प्रस्तुत किया है और इसका न्यूनतम समर्थन मूल्य 1,400/– रू. प्रति क्विंटल है। इस प्रकार आंध्र–प्रदेश के किसान उपभोक्ताओं को 700/– रू. प्रति क्विंटल सस्ता चावल दे रहे हैं। ऐसी प्रतिस्थिति में कोई क्या करे ? अतः स्थान आधारित समाधान और नितियों की आवश्यकता है।

अन्य मुद्दा यह है कि भूमि में जैविक तत्व कम हो रहे हैं और रसायनिक उर्वरकों के उपयोग के कारण उत्पादकता में कमी आ रही है, इस विषय पर विचार नहीं किया जाता। 1960 – 1970 के दशक में उर्वरक का उपयोग काफी अधिक था विशेषकर आज की तुलना में। इसी प्रकार से इसी अवधी के दौरान भूमि की जैविक शक्ति काफी अधिक थी और उत्पादन भी अधिक होता था। प्रत्येक किसान को एन.पी.के. का उपयोग करना चाहिऐ था क्योंकि उस समय मिट्टी में अन्य पुष्टिकर तत्व थे क्योंकि भूमि स्वस्थ और जैविक तत्वों से भरपूर थी। इसमें कमी आने का कारण विदेशों से मंगाऐ गऐ रसायनिक उर्वरकों का उपयोग है। जो किसान अपने

साधनों का उपयोग करते हैं उन्हें प्रोत्साहन नहीं दिया जाता। कुल आर्थिक सहायता योजना वास्तव में भूमि की उर्वरता और भूमि की सेहत बढ़ाने के लिऐ होनी चाहिऐ न कि केवल रसायनिक उर्वरकों के उपयोग पर बल देना चाहिऐ। बहुत अच्छी आशा उस समय बंधी थी जब पुष्टिकर तत्वों पर आधारित आर्थिक योजना के लिऐ ऐन.बी.ऐस. आगे आया था जो जैविक उर्वरकों के लिऐ दी जानी थी लेकिन ऐसा कभी नहीं हुआ।

फॉस्फोरस या पोटाश उर्वरक आर्थिक सहायता की तरह ही जैविक उर्वरकों को भी राशि दी जानी चाहिऐ थी क्योंकि भारतीय मिट्टी में फॉस्फोरस की कमी है। क्या इससे पौधे या फसल की पूरी आवश्यकता की पूर्ति होगी या नहीं, यह तो अन्य मुद्दा है लेकिन किसी न किसी को इस मुद्दे पर आगे बढना चाहिऐ : समान आर्थिक सहायता अपनाई जाऐ ताकि भूमि की जैविक शक्ति में भी सुधार हो सके।

भूमि में जैविक तत्वों की वृद्धि करने से देश को 2 समस्याओं से छुटकारा मिल सकता है, पहली आवश्यक पुष्टिकर तत्वों की कमी को दूर करना। यदि पूरे देश का सर्वेक्ष्ण किया जाऐ तो पता चलेगा की लगभग प्रत्येक क्षेत्रों में ही पुष्टिकर तत्वों की अत्यधिक कमी है। हैदराबाद के आस पास भूमि में लौह और जिंक तत्वों की कमी है और वहां उगाऐ जाने वाले अनाज को खाने वाले खून की कमी और जिंक की कमी से पिडित हैं। इस महत्वपूर्ण मुद्दे का कैसे समाधान होगा जब तक कि रसायनिक उर्वरकों हेतु आर्थिक सहायता को सीमित नहीं कर दिया जाता।

महाराष्ट्र, आंध्र–प्रदेश और कुछ अन्य स्थानों पर बहुत से किसानों ने जैविक कृषि आरंभ कर दी है। इसका कारण कोई फैशन या अधिक मूल्य मिलना नहीं है बल्कि किसानों ने महसूस किया की उनकी भूमि शतिग्रस्त होती जा रही है। इतना होने पर भी कृषि अनुसंधान विश्वविद्यालय इस समस्या को गंभीरता से नहीं ले रहे। इन मुद्दों पर कहीं भी गंभीर चर्चा नहीं की जाती। दीर्धकालिक उर्वरक मूल्यों के प्रति क्या संभावनाऐं हैं ? इन बातों को ध्यान में रखकर नीति में परिवर्तन क्यों नहीं किया जाता ? किसान जैविक उर्वरकों में अपना पैसा लगाते हैं। यदि कोई उर्वरक खरीदता है तो उसे लगभग 1,200/– रू. आर्थिक सहायता मिलती है लेकिन यदि कोई अपनी कंपोस्ट बनाता और अपना परिश्रम लगाकर और साधनों को उपयोग करके खाद्य तैयार करता है उसे आर्थिक सहायता नहीं मिलती। क्या देश में एक ऐसी नीति नहीं होनी चाहिऐ जो इस प्रकार के किसानों की भी सहायता करे। किसानों के अपने साधन और मजदूरी को कभी भी लागत में शामिल नहीं किया जाता। सी.ऐ.सी.डी. के आंकडों में दिखाया गया है कि किसानों की मजदूरी की लागत पर विवेकपूर्ण ढंग से विचार नहीं किया जाता जिस कारण उनकी लागत प्रभावित होती है। कोई किसानों के अपने संसाधनों अपने मजदूरों की कैसे सहायता कर सकता है ? जब तक इन मुद्दों पर विचार नहीं किया जाता यह समस्या समाप्त होने वाली नहीं है।

एक अन्य प्रश्न रसायनिक उर्वरकों में अत्यधिक शक्ति के उपयोग का है और इस कारण कुछ समय के पश्चात ही इससे छुटकारा पाने की आवश्यकता होगी। जब भी गैर पारंपरिक उर्जा संसाधनों की बात की जाती है तो गैर पारंपरिक संसाधनों पर भी विचार करने की आवश्यकता है। लोग कहते हैं कि पौष्टिक तत्वों और जैविक कृषि के गैर पारंपरिक संसाधन अपर्याप्त हैं। लेकिन यह सब किसान के अपने ज्ञान पर निर्भर करता हैं। इतना होने पर भी तकनीकी सुधार के क्षेत्र में कोई निवेश नहीं किया जा रहा है। शायद किसी भी कृषि विश्वविद्यालय ने इस पर कार्य नहीं किया है। कुल कृषि अनुसंधान में खर्च की गई कुल राशि में से एक प्रतिशत भी इस देश की जैविक कृषि पर खर्च नहीं किया गया। इस प्रकार के किऐ जाने वाले निवेश का परिणाम कभी जाना जा सकता है जब इस क्षेत्र में निवेश कर दिया जाऐ।

आंध्र–प्रदेश का अनुभव है कि किसी वैक्लपिक मॉडल को अपनाना ज्ञान आधारित अधिक होता है और किसानों को विकल्प तभी चुनना चाहिऐ जब अपने संसाधनों के उपयोग की समझ हो। किसान विकल्प अपनाऐंगे यदि उचित निवेश किया जाऐ और आंध्र–प्रदेश का उत्कृष्ट उदाहरण है जहां पर प्रति उपयोगकर्ता ने 50 प्रतिशत कीटनाशकों का उपयोग कम किया है। यह आंकडे भारत सरकार की वेबसाईट पर कृषि गणना के हैं। महाराष्ट्र,

गुजरात या कर्नाटक जैसे अन्य राज्य जिन्होंने ऐसी फसल पद्धति अपनाई है वहां पर कीटनाशकों के उपयोग में कमी देखने को नहीं मिली। इस प्रकार अधिक निवेश और सक्षम विस्तृत कार्यक्रमों से किसान इन पद्धतियों को अपनाने में गंभीरता से विचार कर सकते हैं।

नाइट्रोजन का अत्यधिक उपयोग निसंदेह एक गंभीर मुद्दा है। देश भर के सभी क्षेत्रों में कीट समस्या (सकिंग पेस्ट प्रॉबल्मस) बडी है। इस समस्या से चावल और कपास में ब्राउन प्लांट हॉपर बढ रही है क्योंकि नाइट्रोजन का अधिक उपयोग हो रहा है। इसका प्रमुख कारण चालू आर्थिक सहायता देने की विधि है जो अन्य पौष्टिक तत्वों की तुलना में यूरिया को सस्ता बना देती है।

अंतिम प्रश्न किसानों को सीधे आर्थिक सहायता देने से संबंधित है। यह एक अच्छा सुझाव है और इस उपाय को जैविक उर्वरकों के लिऐ भी अपनाना चाहिऐ। किसानों को चुनने दिया जाऐ की वे क्या उपयोग करना चाहते हैं। अब अन्य प्रश्न देश में किराऐ पर खेती करने वालों तक पहुंचने का है। संपूर्ण आंध्र–प्रदेश से उदाहरण लिया जा सकता है जिसमें लगभग 40 लाख किराऐ के किसान हैं उनमें से केवल 20 प्रतिशत को कृषि ऋण मिल पाता है क्योंकि किराऐदारी को कभी महत्व नहीं दिया जाता। अतः यह किसान किसी भी संस्था से ऋण नहीं ले पाते न ही इन्हें सरकार से काई समर्थन या सहायता मिलती है।

भ्रष्टाचार एक गंभीर मुद्दा है और जब दोशी पकडा भी जाता है तो वह अपने को छुडाने की व्यवस्था कर लेता है। कम्पलैक्स फर्टीलाइजर फैक्ट्रियों के माध्यम से किसानों को दी जाने वाली उर्वरक की अवैध बिक्री और आर्थिक सहायता का दुरउपयोग इसका एक उदाहरण है। जैविक कृषि को अपनाने के लिऐ एक मजबूत अभियान चलाने की आवश्यकता है ताकि कम से कम 50 प्रतिशत किसानों को जैविक कृषि अपनाने के लिऐ प्रोत्साहित किया जा सके किंतु यह कैसे होगा ? सरकार को एक भूमि स्वास्थ्य या भूमि उर्वरता नीति अपनानी चाहिऐ तथा एक न्यूट्रिऐंट सब्सिडी स्कीम बनानी चाहिऐ जो विशिष्ट होनी चाहिऐ और उन लोगों तक अवश्य पहुंचे जिन्हें वास्तव में इनकी आवश्यकता है।